ओ३म्

अनुरागरत्न

अर्थात्

वैदिकसिद्धान्त सम्पन्न

आर्य्य भाषा का एक पद्यात्मक

अपूर्व ग्रन्थ

पं० नाथूराम शङ्कर शर्म्मा (शङ्कर),

प्रणीत

हरिशंकर शर्म्मा, द्वारा प्रकाशित

पं० ब्रज वल्लभ मिश्र के वल्लभ प्रेस,

अलीगढ़ में मुद्रित।

प्रथमावृत्ति	संवत् १९७०	मूल्य १),
३११५ प्रतियां	सन् १९१३ ई०	डाकव्यय पृथक्

विनय-निवेदन

(किसी ने क्या ही अच्छा कहा है):-

"दृष्टं किमपि लोकेऽस्मिन्, निर्दोषं न च निर्गुणम्"

(काव्यलक्षण)

"काव्यं रसात्मकं वाक्यं"

"तदल्पमपि नोपेक्ष्यं काव्ये दुष्टं कथञ्चन"

एकोहि दोषो गुणसन्निपाते। निमज्जतीन्दोःकिरणेष्विवाङ्कः ॥

(बस यही एक सहारे की बात है)

(काव्य के भेद)

ध्वनि १=व्यंग्य प्रधान उत्तम काव्य *गुणीभूत व्यंग्य २=व्यंग्य अप्रधान मध्यम काव्य * साधारण ३=अवरवाच्य जिस काव्य में व्यंग्य न होने पर भी चमत्कार हो।

(काव्य के अङ्ग)

छन्द १=मात्रिक १ वर्णिक २ मुक्तक ३ *अलङ्कार २=शब्दालङ्कार १ अर्थालङ्कार २ उभयालङ्कार ३*विभाव ३=आलम्बन १ उद्दीपन २* अनुभाव ४=सात्विक १ कायिक २ मानसिक ३* स्थायीभाव ५=रति १ हास २ शोक ३ क्रोध ४ उत्साह ५ भय ६ ग्लानि ७ आश्चर्य ८ निर्वेद ९ * संचारीभाव ६= निर्वेद १ ग्लानि २ शंका ३ असूया ४ श्रम ५ मद ६ धृति ७ आलस्य ८ विषाद ९ मति १० चिन्ता ११ मोह १२ स्वप्न १३ विबोध १४ स्मृति १५ अमर्ष १६ गर्व १७ उत्सुकता १८ अवहित्थ १९ दीनता २० हर्ष २१ व्रीड़ा २२ उग्रता २३ निद्रा २४ व्याधि २५ मरण २६ अपस्मार २७ आवेग २८ त्रास २९ उन्माद ३० जड़ता ३१ चपलता ३२ वितर्क ३३ * व्यंग्य ७=व्यञ्जना शाब्दी १ आर्थी २ *

रस ८=श्रृंगार १ हास्य २ करुणा ३ रौद्र ४ वीर ५ भयानक ६ अद्भुत ७ वीभत्स ८ शान्त ९ * शब्द ९=वाचक १ लक्षक २ व्यञ्जक ३ * अर्थ १०=वाच्यार्थ १ लक्ष्यार्थ २ व्यंग्यार्थ ३ (अर्थ असंख्य हैं)

(शक्ति)

अभिधाशक्ति१=वाचक शब्द से वाच्यार्थ का बोधकरानेवाली १

लक्षणाशक्ति२=लक्षक शब्द से लक्ष्यार्थ को जतानेवाली २

व्यञ्जनाशक्ति३=व्यञ्जक शब्द से व्यंग्यार्थ को प्रकट करनेवाली ३

(काव्य दोष)

शब्ददोष१=कर्णकटु १ भाषाहीन २ अप्रयुक्त ३ असमर्थ ४ निहतार्थ ५ अनुचितार्थ ६ निरर्थक ७ अवाचक ८ अश्लील ९ ग्राम्य १० अप्रतीत ११ नेयार्थ १२ समास १३ क्लिष्ट १४ विरुद्ध-प्रतिकृत १५ अगुण १६

वाक्यदोष२=प्रतिकूलाक्षर १ यतिभङ्ग २ विसन्धि ३ न्यूनपद ४ अधिकपद ५ कथितपद ६ प्रक्रम भङ्ग ७

अर्थदोष३= अपुष्टार्थ १ कष्टार्थ २ व्याहत ३ पुनरुक्ति ४ संदिग्ध ५ साकांक्षा ६ विरुद्ध

रसदोष४=प्रत्यनीक १ विरस २ रसविरुद्ध ३ अप्रतपरार्थ ४ रसहीन ५

इत्याद्यनेक नियमानुसार सुकवि-समाज-निर्मित सत्काव्य निकलतेथे, निकलते हैं और निकलेंगे, परन्तु मुझ महातुच्छ मूढ़ मनुष्य की साधारण पद्यरचना सुप्रसिद्ध-रससिद्ध-कविकुल रचित विशुद्धकविता की बराबरी कदापि नहीं करसकती तोभी यह "अनुरागरत्न" बहुत कुछ विचार पूर्वक रचा गया है।

(इति) कविकुल किङ्कर,

शङ्कर ।

ओ३म् ॥

समर्पण

श्रीमन्महोदय, साहित्य-विद्याविशारद,काव्य-कानन-केसरी, **पण्डित पद्मसिंहजी शर्म्मा**, सम्पादक, "भारतोदय" मंत्री, आर्य्यविद्वत्सभा ।

भगवन्! जिसको (कविता पर प्रसन्न होकर) श्रीमती महा विद्यालय सभाने (आर्य्य विद्वत्सभा द्वारा) वह स्वर्ण पदक प्रदान किया है जिस पर आपका विश्व विख्यात नाम तथा यह श्लोक अंकित है:-

"कविता कामिनी कान्तः, श्रीनाथूराम शंकरः ।
ज्वालापुरार्य विदुषां, सभयामान्यतेतराम्" ॥

वही कवि कुल किंकर नाथूराम शंकर शर्म्मा (शंकर) स्वरचित "अनुरागरत्न" श्रीसेवा में समर्पण करता है। आशा है कि सुदामा के तण्डुलों की भाँति इस महा तुच्छ भेंट से श्रीमान् का कुछ न कुछ मनोरंजन अवश्यही होगा।

(किसी कविने क्याही अच्छा कहा है):-

"तत्वंकिमपिकाव्यानां, जानाति विरलोभुवि ।
मार्मिकःकोमरन्दाना, मन्तरेण मधुव्रतम् ॥

सम्पर्क

सेवक विनीत,

नाथूरामशङ्कर शर्म्मा (शंकर),

हरदुआगंज, अलीगढ़ ।

[* ओ३म् *]

अनुरागरत्न

भूमिकोद्गार

ब्रह्मवन्दनात्मक ब्रह्मोक्ति।

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ य० अ० १६ मं ४१ ॥

शंकर को शङ्कर का प्रणाम (१)

(शङ्कर-छन्द*)

जो सर्वज्ञ, सुकवि, सुखदाता, विश्व विलास विधाता है।
जो नव द्रव्य योग उमगाता, शुद्ध एक रस पाता है॥
अपनाते हैं जिस अक्षर को, क्षणिक रूप, क्षरनाम।
शंकर! उस प्यारे शंकर को, कर कर जोड़ प्रणाम ॥१॥

---

* (सर्वज्ञ) तत्रनिरतशयं सर्वज्ञबीजम् ॥ यो० अ० १ पा० १ सू० २५।

(सुकवि) कविर्मनीषी परिभूःस्वयंभूः ॥ य० अ० ४० मन्त्रांश ८-

(कवि) यःकौति शब्दयतिसर्वाविद्या सकविरीश्वरः-

"स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रियाच"

(श्लोक) नित्यंसर्वगतोह्यात्मा, कूटस्थो दोष वर्जितः
एकःसभिद्यते शक्त्या, माययानस्वभावतः ॥ १ ॥

(मंत्र) यस्मिन्सर्वाणिभूतान्यात्मैवा भूद्विजानतः।
तत्रको मोहः कः शोक-एकत्वमनुपश्यतः। य० अ० ४० मं० ७

(नवद्रव्य) पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालोदिगात्मामनइतिद्रव्याणि ॥
वै० अ० १ आ० १ सू० ५—
क्रियागुणवत्समवायिकारणमितिद्रव्यलक्षणम् ॥
वै० अ० १ सू० १५

(शंकर) यः शङ्कल्याणं सुखंकरोति सशंकरः-

तल्लीनोद्धार (२), दोहा ॥

शंकर स्वामी से मिला, बिछुड़ा शंकर दास।
भानु प्रभासा द्वैतका, भिन्नअभिन्नविलास ॥१॥

गूढ़ार्थ गर्भोक्ति (३) षट्पदी छन्द।

शंकर सबका ईश, इष्ट मंगल दाता है।
शंकर के गुण गाय, गाय जी सुख पाता है ॥
शंकर कर कल्याण, योगियों को अपनावे।
शंकर गौरव रूप, राम से जन जन्मावे ॥
श्री शंकर की प्यारी*उमा, रविसी हरिसी भासती।
रे शंकर विद्या की वही, मूल शारदा भगवती ॥१॥

(षट्पदी छन्द) यहपद्य शंकर परमात्मा का कीर्त्तन करता हुआ (शंकर) ग्रन्थकार के अविद्यमान पूर्वजों और विद्यमान कौटुम्बिकों के नामों को भी यथाक्रमप्रकट करता है (देखिये, पढ़िये, समझिये)

(१ च०) मंगल+सेन=मंगल सेन (शर्म्मा) वृद्ध प्रपितामह—
(२ च०) जीसुख+राम=जीसुखराम (शर्म्मा) प्रपितामह —
(३ च०) कल्याण+दत्त=कल्याणदत्त (शर्म्मा) पितामह—
(४ च०) गौरवरूप से रूप+राम=रूपराम (शर्म्मा) पिता—

(उपर्य्युक्त महानुभाव इस संसार में नहीं हैं).

(५च०) श्रीशंकर की प्यारी=शंकरा अर्थात् धर्म पत्नी
उमा+शंकर=उमा शङ्कर प्रथम ज्येष्ट पुत्र –
रवि+शंकर=रविशङ्कर द्वितोय २ पुत्र
हरि+शंकर=हरिशङ्कर तीसरा पुत्र (अनुराग-रत्न प्रकाशक)
भासती – से – सती+शङ्कर=सतीशङ्कर चौथा पुत्र
विद्या+वती=विद्यावती – एक मात्र पुत्री
मूल+शङ्कर=मूलशङ्कर – पौत्र –
शारदा+देवी=शारदादेवी – पौत्री –
भगवती×२=दो भगवती पुत्र वधू

(उमा) "उमाहैमवतीम्" केनोपनिषद् चतुर्थखण्ड

* श्री० स्वामी शंकराचार्यजीने उमा का अर्थ विद्या, तथा हेमवती का भाव शोभावाली लिखा है।

शंकरस्वामी, शंकरदास (४)

(दोहा)

शंकरस्वामी और है, सेवक शंकर और ।
भेद भावना में भरे, नाम रूप सब ठौर ॥१॥

---

* प्रार्थनापञ्चक (५) *

* सगणात्मक—सवैया *

द्विज वेद पढ़ें, सुविचार बढ़ें, बल पाय चढ़ें, सब ऊपर को ।
अविरुद्ध रहैं, ऋजु पन्थ गहैं, परिवार कहैं, वसुधा भर को ॥
ध्रुव धर्म धरें, पर दुःख हरें, तन त्याग तरें, भव सागर को ।
दिन फेर पिता, वरदे सविता, करदे कविता, कवि शंकर को ॥१॥

विदुषी उपजें, क्षमता न तजें, व्रत धार भजें, सुकृती बर को ।
सधवा सुधरें, विधवा उबरें, सकलंक करें, न किसी घर को ॥
दुहिता न बिकें, कुटनी न टिकें, कुलबोर छिकें, तरसें दर को ।
दिन फेर पिता, वरदे सविता, करदे कविता, कवि शंकर को ॥२॥

नृपनीति जगे, न अनीति ठगे, भ्रम भूत लगे, न प्रजाधर को ।
झगड़े न मचें, खलखर्व लचें, मद से न रचें, भट संगर को ॥
सुरभी न कटें, न अनाज घटें, सुख भोग डटें, डपटें डर को ।
दिन फेर पिता, बरदे सविता, करदे कविता, कवि शंकर को ॥३॥

महिमा उमड़े, लघुता न लड़े, जड़ता जकड़े, न चराचर को ।
शठता सटके, मुदिता मटके, प्रतिभा भटके, न समादर को ॥
विकसे विमला, शुभकर्म-कला, पकड़े कमला, श्रमके कर को ।
दिन फेर पिता, बरदे सविता, करदे कविता, कवि शंकर को ॥४॥

मत जाल जलें, छलिया न छलें, कुल फूल फलें, तज मत्सर को।
अघ दम्भ दबें, न प्रपञ्च फबें, गुरु मान नबें, न निरक्षर को॥
सुमरें जप से, निरखें तप से, सुरपादप से, तुझ अक्षर को।
दिन फेर पिता, वरदे सविता, करदे कविता, कवि शंकर को॥५॥

आनन्दनाद (६)

(दोहा)

तू मुझसे न्यारा नहीं, मैं तुझसे कब दूर।
तेरी महिमा से मिली, मेरी मति भरपूर॥१॥

(समस्या) चमके अनुरागरत्न मेरा (पूर्ति)

(कलाधरात्मक मिलिन्दपाद (७)

कवि शंकर विश्वके विधाता। मुद मङ्गल मूल मुक्तिदाता॥
भगवादि पवित्र नाम धारी। भवसागर सेतु शोक हारी॥
प्रभु पाय प्रकाश पुंज तेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा॥१॥

जिसके उपदेश में दया है। अति-आ धन नन्द छागया है॥
जिसने न सरस्वती विसारी। विचरा बन बालब्रह्मचारी+॥
उसके तप तेज का बसेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा॥२॥

मग-दीपक-ब्रह्म-ज्ञानका है। उपलक्षण धर्म ध्यान का है॥
लघु लक्ष्यपरोपकार का है। प्रण पक्ष सभा सुधार का है॥
जगदुन्नति पै जमाय डेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा॥३॥

+ इस पद्य से महर्षि दयानन्द सरस्वतीजीका नाम निकलता है।

गुण गायक धर्मराज का है। अनुभाव सुधी-समाज का है ॥
शुभचिन्तक भारतेशका है। उपहार दरिद्र देश का है ॥
कवि मण्डलका कहाय चेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥४॥

अगले कवि ऋक्ष× से सही थे। तुलसी शशि, सूर सूरही थे ॥
अब केशव की न होड़ होगी। फिर कौन बने कबीर योगी ॥
कविता कृषि-कर्मका कमेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥५॥

रचना रसराज की निहारी। जयसिंह सखा बना बिहारी ॥
विधि वीर बिलास की बिराजी। कवि भूषण को मिला शिवाजी ॥
कर मेल ÷ कुबेर से घनेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥६॥

सबको वह देश-भक्त भाया। जिसने पद भारतेन्दु * पाया ॥
रच ग्रन्थ घने सुधार बोली। कविता पर प्रेम गांठ खोली ॥
हरिचन्द हटा रहै अँधेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥७॥

शुभ-शब्द-प्रयोग, पद्य प्यारे। रच पिङ्गल रीति से सुधारे ॥
रस, भूषण, भावसे भरे हैं। परखें पटु-पारखी खरे हैं ॥
मनके सुविचारका चितेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥८॥
कवि कोविद ध्यान में धरेंगे। सदभिज्ञ विवेचना करेंगे ॥

× ऋक्ष = तारा - सितारा -
÷ कुबेर = परमात्मा - धनेश -
* भारतेन्दु = नागरी नायक बाबू हरिश्चन्द्रजी।

सब साधन सत्य के गहैंगे। गुण दूषण न्याय से कहैंगे ॥
परखे पर तर्क का तरेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥९॥

सब धान समान तोल डालें+। समझे पिक और काक काले ॥
समता मणि काच में बखाने। अनभिज्ञ भला बुरा न जाने ॥
न बने उस ऊँटका कटेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१०॥

भजनीक, सुबोध, भक्त गावें। न कपोल कुरागिया बजावें ॥
रचना पर प्रीति हो बड़ों की। गरजे न गढ़ंत तुकड़ों की ॥
गरिमा न गिरासके गमेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥११॥

परपद्य, प्रसंग काटते हैं। यशका रस चोर चाटते हैं ॥
छलिया छलसे न छूटते हैं। गढ़ ग्रन्थ लबार लूटते हैं ॥
लगजाय न लालची लुटेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१२॥

चमगिदड़ चोर डोलते हैं। शठ स्यार उलूक बोलते हैं ॥
बिन भानु-प्रदीप, चन्द्र तारे। तम घोर घटा सके न सारे ॥
रजनी कटजाय हो सबेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१३॥

बल, पौरुष का प्रकाश होगा। श्रम साहस का विकाश होगा ॥
गुरुता गुरु ज्ञान की बढ़ैगी। लघुता अभिमान की कढ़ैगी ॥

+सब धान समान तोल डाले=श्लोक

परीक्षका: सन्तिनयत्रदेशे - नार्घन्तिरत्नानिसमुद्रजानि -
आभीरदेशेकिलचन्द्रकान्तं - त्रिभिर्वराटैर्विपणन्तिगोपा: ॥१॥

प्रभुने अनुकूल काल फेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१४॥
तनदृश्य जरा अशक्ति का है। मन भाजन जाति भक्ति का है॥
धनराशि न पास दाम को है। मृदुभाषण मात्र मान को है॥
यश उज्ज्वलका उघार घेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१५॥
अनुभूत विवेक यंत्र डाला। मथ सत्यसमुद्र को निकाला॥
बर वर्ण सुवर्ण में जड़ा है। हित के हिय हार में पड़ा है॥
बतलाये न लाख का लखेरा।
चमके अनुरागरत्न मेरा ॥१६॥

भगवती–भारती[१] (८)

(सोरठा)

जिसके आननचार, उत्तम §अन्तःकरण हैं।
दुहिता परमोदार, उस*विरञ्चिकी भारती ॥१॥

सरस्वतीकी महावीरता (९)

(भुजङ्गप्रयात)

महावीरता भारती धारती है।
प्रमादी महामोहको मारती है॥
बड़ोंके बड़े कामकी है लड़ाई।
मिलीथी, मिलीहै, मिलेगीबड़ाई ॥१॥

---

[१] भारती = सरस्वती – वाग्देवता – जीव की वह शक्ति जिस के द्वारा अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करता है और आत्मज्ञता पूर्वक ब्रह्मका व्याख्याता बनता है –

§ उत्तम अन्तः करण = सत्यसम्पन्नमन १, ज्ञानविशिष्टबुद्धि २, योगयुक्त चित्त ३, आत्मप्रतिष्ठापूर्ण अहंकार ४ –

* विरञ्चि = ब्रह्मा अर्थात् जीवात्मा –

(घनाक्षरी कवित्त)

वैदिक विलास करे ज्ञानागार कानन में,
धर्मराज हंस पै समोद चढ़ती रहै ।
फेर फेर दिव्यगुण मालिका प्रवीणता की,
पुस्तक पै मूलमंत्र पाठ पढ़ती रहै ॥
योग बल वीणाके विचार व्रत तार बाजें,
अज्झल बिशिष्टबाणी घोर कढ़ती रहै ।
शंकर विवेक माणवल्लभा सरस्वती में,
मेधा महावीरता अमित बढ़ती रहै ॥ १ ॥

बालब्रह्मचारी के विशद भाल मन्दिर में,
आसन जमाय ज्ञान दीपक जगाती है ।
सत्य और झूंठ की विवेचना प्रचंड शिखा,
कालिमा कुयश की कपटपै लगाती है ॥
प्रेमपालपौरुष प्रकाश की छबीली छटा,
बधिक विरोध अन्धकार को भगाती है ।
शंकर सचेत महावीरता सरस्वती की,
जीव की ठसक ठगियों से न ठगाती है ॥२॥

आपसके मेलकी बड़ाई भरपेट करे,
सामाजिक-शक्ति-सुधा पान करती रहै ।
भूले न प्रमाणको तजे न तर्कसाधनको,
युक्ति चातुरी के गुणगान करती रहै ॥
मानकरे वाद, प्रतिवाद, कोटि, कल्पनाका,
जाल जल्पना का अपमान करती रहै ।
शंकर निदान महावीरता सरस्वती की,
मारालिक न्याय सदा दान करती रहै ॥ ३ ॥

प्रामादिक पोच पक्षपात के न पास रहै,
सत्य को असत्य से अशुद्ध करती नहीं।
औपाधिक धारणा न सिद्धि के समीप टिके,
स्वाभाविक चिन्तन में भूल भरती नहीं॥
न्याय की कठोर काट छांट को समोद सुने,
कोरे कूटवाद पर कान धरती नहीं।
शंकर अशंक महावीरता सरस्वती की,
उद्धत अजान जालियों से डरती नहीं॥४॥

मन्दमत तारों की कुवासना दमक सारी,
वैदिक विवेक तप तेज में बिलाती है।
ध्येय ध्यान, धारणादि, साधना सरोवर में,
सामाधिक संयम सरोरुह खिलाती है॥
शंकर से पावे सिद्ध चक सिद्धि चकई को,
योग दिन में न भेद रजनी मिलाती है।
ब्रह्म रवि ज्योति महावीरता सरस्वती की,
शुद्ध अधिकारियों को अमृत पिलाती है॥५॥

ब्रह्मां, मनु, अङ्गिरा, बसिष्ट, व्यास, गोतम से,
सिद्ध, मुनि मण्डल के ध्यान में धसी रही।
राम और कृष्ण के प्रताप की विभूति बनी,
बुद्ध के विशुद्ध ध्रुव लक्ष्य में लसी रही॥
शंकर के साथ कर एकता कबीरजी की,
सुरत सखी के गास गास में गसी रही।
मेंट मत पन्थ महावीरता सरस्वती की,
देव दयानन्द के बचन में बसी रही॥६॥

मान दान माघ को, महत्व दान मम्मट को,
दान कालिदास को सुयश का दिला चुकी ।
रामामृत तुलसी को, काव्यसुधा केशव को,
राधिकेश भक्तिरस सूर को पिलाचुकी ॥
मुख्य-मान-पान देश भाषा परिशोधन का,
भारत के इन्दु हरिचन्द को खिलाचुकी ।
सुकवि-सभा में महावीरता सरस्वती की,
शंकरसे दीन मतिहीन को मिलाचुकी ॥ ७ ॥

साहसी सुजान को सुपन्थ दिखलाती रहै,
कायर कुचालियों की गैल गहती नहीं ।
पुण्यशील भिक्षुक अकिञ्चन को ऊँचा करे,
पापी धनपति को प्रतापी कहती नहीं ॥
उद्यमी उदार के सुकर्म की सुख्याति बने,
आलसी कृपण की बड़ाई सहती नहीं ।
शंकर अदम्य महावीरता सरस्वती की,
वञ्चक बनावटी के पास रहती नहीं ॥ ८ ॥

प्यार भरपूर करे लोकसिद्ध सभ्यता पै,
अधमा असभ्यता पै रोष करती रहै ।
ग्रन्थकार लेखक महाशयों की रचना से,
भाषा का विशद बड़ा कोष करती रहै ॥
पक्षपात छोड़कर सत्य समालोचना से,
लेखों के प्रसिद्ध गुण दोष करती रहै ।
शंकर पवित्र महावीरता सरस्वती की,
प्रेमी पुरुषों का परितोष करती रहै ॥९॥

राजभक्ति भूषिता प्रजा में सुख भोग भरे,
मंगल महामति महीप का मनाती है।
धीर, धर्मवीर, कर्मवीर, नर नामियों के,
जीवन अनूठे जन जन को जनाती है॥
बांध परतंत्रता स्वतंत्रता को समता से,
प्रीति उपजावे भ्रम भंग न छनाती है।
शंकर उदार महावीरता सरस्वती की,
बानिक सुधार का यथाविधि बनाती है॥१०॥

दान और भोग से बचाय धन सम्पदा को,
भागे सब सूम साथ कुछ भी न ले गये।
हिंसक, लवार, राजद्रोही, ठग, जार, ज्वारी,
काल विकराल की कुचाल से दले गये॥
तामसी, बिसासी, शठ, मादकी, प्रमाद भरे,
लालची मतों के छल बल से छले गये।
शंकर मिली न महावीरता सरस्वती की,
पातकी बिताय वृथा जीवन चले गये॥११॥

झंझट अड़ाय अड़े झकड़ी अजान जूझें,
हारे उपदेशक सुधारक न जीते हैं।
प्रेमामृत बूंद भी मिला न प्रेमसागर से,
बैरवारि से न कुविचार घट रीते हैं॥
काट काट एकता का शोणित बहाय रहे,
हाय! न मिलाप महिमा का रस पीते हैं।
शंकर फली न महावीरता सरस्वती की,
जीवन अधम अनमेल ही में बीते हैं॥१२॥

भारतीसे याचना (१०)

(सोरठा)

प्रकटे महदुद्योत, ब्रह्म विवेक दिनेश का ।
चमकें मत खद्योत, अब न अविद्या रातमें ॥ १ ॥

कविकुलकी मङ्गल कामना* (११)

(षट्पदीछन्द)

सुन्दर शब्द प्रयोग, मनोहर भाव रसीले ।
दूषण-हीन प्रशस्त, पद्य भूषण भड़कीले ॥
प्रिय प्रसादता पाय, मर्म महिमा दरसावे ।
रसिकों पर आनन्द, सुधा-शीकर बरसावे ॥
जिन के द्वारा इस भांति की, परम शुद्ध कविता कढ़े ।
उन कविराजों का लोक में, सुयश सदा शंकर बढ़े ॥१॥

कविकी सदाशा (१२)

(दोहा)

रहती है जो शारदा, कविमण्डल के साथ ।
क्या!शंकर के शीशपै, वह न धरेगी हाथ ॥ १ ॥

---

*(प्राचीन श्लोक)

"किंकवेस्तस्यकाव्येन, किंकाण्डेनधनुष्मतः।
परस्य हृदये लग्नं, नघूर्णा यति यच्छिरः॥ १॥"
"धर्मार्थ काम मोक्षेषु, वैचक्षण्यं कलासुच।
करोति कीर्तिं प्रीतिंच, साधुकाव्यनिषेवणम् ॥ २ ॥"

कविता की बड़ाई (१३)

(दोहा)

दोहा कविता गायका, जब दोहा बनजाय।
तब दोहा' साकारहो, नब यश दोहा खाय॥ १॥

प्रणयपंचक (१४)

(दोहा)

सत्कविता के पारखी, प्यारे सुकवि समाज।
कृपया मेरी ओर भी, देख यथोचित आज॥ १॥

रखता है तू न्याय से, जिस पै हितका हाथ।
अपनालेता है उसे, फिर न बिसारे साथ॥ २॥

जो मेरी मति ने तुझे, कुछ भी किया प्रसन्न।
तो मन मानेगा उसे, विनय शक्तिसम्पन्न॥ ३॥

वर्तमान बोली खड़ी, पकड़ी चाल नवीन।
सारी रचना जांचले, परख प्रथा प्राचीन॥ ४॥

जो सरस्वती आदिमें, निकल चुके हैं लेख।
उनकी भी संशोधना, इस ग्रन्थन में देख॥ ५॥

प्रस्ताव पंचक (१५)

(दोहा)

अपनाले साहित्य को, कर भाषा पर प्यार।
गुण गाले संगीत के, शंकर काव्यसुधार॥ १॥

गद्य, पद्य, चम्पू रचें, सिद्ध सुलेखक लोग ।
उनकी शैली सीखले, कर साहित्य प्रयोग ॥ २ ॥
भारत—भाषा का बढ़े, मान महत्व अपार ।
गौरव धारे नागरी, ललित लेख विस्तार ॥ ३ ॥
नारद की शिक्षा फले, पाय भरत से मान ।
लोकमित्र संगीत का, उमगे मङ्गल गान ॥ ४ ॥
भव्य कल्पना-शक्ति से, प्रतिभा करे सहाय ।
ब्रह्मानन्द सहोदरा, सत्कविता बनजाय ॥ ५ ॥

पद्यरचनाकी विशेषता (१६)

[शंकर छंद]

अक्षर तुल्य वर्ण वृत्तों में, सहित गणों के आवेंगे ।
मुक्तक,छन्द,मात्रिकों में भी, वर्ण बराबर पावेंगे ॥
देखो पद प्रत्येक पद्य के, सकल विधान प्रधान ।
समता से दल,खण्डों में भी, गुरु, लघु गिनो समान ॥ १ ॥

ग्रन्थकार का आत्म परिचय (१७)

(षट्पदी छन्द)

पढ़ विद्या भरपूर, न पण्डितराज कहाया ।
बन बल-धारी शूर, न यश का स्रोत बहाया ॥
उद्यम को अपनाय, न धनका कोष कमाया ॥
जीवन में सदुपाय, न सेवक भाव समाया ।
हा ! कुछ भी गौरव-कंज का, सौरभ उड़ा न चूक है ।
धिक्कूप हरदुआगंज का, शंकर शठ मण्डूक है ॥ १ ॥

अनुरागरत्न का जन्मकाल १८

(हरिगीतिकाछन्द)

बसु, राग, अङ्क, मयङ्क, संवत्, विक्रमीय उदार है ।
तिथि पञ्चमी सित पक्षकी मधु, मास मङ्गलवार है ॥
मतिमन्द शंकर होचुका अब, ठीक बावन वर्ष का ।
"अनुरागरत्न" अमोल पाकर, भोग जीवन हर्ष का ॥ १ ॥

आनन्दोद्गार १९

कलाधरात्मकराजगीत

सिज में नट राज ला चुका है ।
उस नाटक में नचा चुका है ॥
जिस के अनुसार खेल खेले ।
वह शैशव दूर जा चुका है ॥
उस यौवन का न खोज पाता ।
अपना रस जो चखा चुका है ॥
तन पंजर होगया पुराना ।
मन मौज नवीन पाचुका है ॥
अब शीकर सिन्धु में मिलेगा ।
शुभ काल समीप आचुका है ॥
शिव शंकर का मिलाप होगा ।
दिन अन्तर के बिता चुका है ॥

मङ्गलगान २०

(दोहा)

ज्ञानी सिद्धसमाज में, करले मंगल गान ।
ज्ञान गायनानन्द का, दे हम सबको दान ॥

मङ्गलोद्गार-गीत २१

गारे गारे मंगल बार बार ॥ टेक ॥

धर्म धुरीण धीर व्रत धारी, उमग योग बल धार, धार ॥
गारे गारे मंगल बार बार ।
ठौर ठौर अपने ठाकुर को, निरख प्रेम निधि बार, बार ॥
गारे गारे मंगल बार बार ।
तर भवसिन्धु आप औरों में, अभय भाव भर तार, तार ॥
गारे गारे मंगल बार बार ।
माग दयालु देव शंकरसे, चतुर! चारु फल चार, चार ॥
गारे गारे मंगल बार बार ।

भावार्थ सार २२

(दोहा)

बांच लीजिये भूमिका, भाव नहीं कुछ और ।
जागे जाति सुधारकी, नीव जमे सब ठौर ॥

सेवकविनीत

नाथूराम शंकर शर्म्मा, (शंकर)

हरदुआगंज (अलीगढ़) ।

इति

ओ३म्

अनुरागरत्न

(मङ्गलोल्लास)

विश्वानिदेव सवितर्दुरितानिपरासुव ।
यद्भद्रंतन्न आसुव ॥ य० अ० ३ मं० ३ ॥

सद्गुरु सूक्ति

सर्वात्मा सच्चिदानन्दो, नन्तो योन्याय कृच्छुचिः ।
भूयात्तमां सहायो नो, दयालुः सर्वशक्तिमान् ॥ १ ॥

शङ्कर विश्व, शंकरभक्त १

(दोहा)

शंकर स्वामी से न हो, शंकर सेवक दूर ।
न्याय दया मागे मिले, ज्ञान भक्ति भरपूर ॥ १ ॥

मङ्गल-कामना २

(सोरठा)

मंगलमूल महेश, दूर अमंगल को करे ।
ज्ञानविवेक दिनेश, मोह महातमको हरे ॥ १ ॥

ॐप्रणव-प्रशंसा ३

दोहा

शंकर स्वामी के सुने, शंकर नाम अनेक ।
मुख्य सर्वतोभद्र है, मङ्गलमय ओमेक ॥ १ ॥

*ओमुत्कर्ष ४

(शङ्करछन्द)

एक इसी को अपना साथी, अर्थ अशेष बताते हैं ।
उच्चारण के साधन सारे, रसना रोक जताते हैं ॥

ऐसा उत्तम शब्द कोष में, मिला न अबतक अन्य ।
ओमुद्भूत नाम शंकर का, सकल कलाधर धन्य ॥ १ ॥

ओमर्थज्ञान ५

(दोहा)

मुख्य नामहै ईश का, ओमनुभूत प्रसिद्ध ।
योगी† जपते हैं इसे, सुनते हैं सब सिद्ध ॥

ॐतस्यवाचकः प्रणवः ॥ यो० अ० १ पा० १ ॥

*(ओ३म्) परमात्मा का मुख्य नाम है-इस का अर्थ मात्र से स्वाभाविक सम्बन्ध है-कण्ठ से ओष्ठ तक जितने वर्णोत्पादक स्थान हैं वे सब इस (ओ३म्) के उच्चारण में काम आजाते हैं-परन्तु जिह्वा का व्यापार बन्द रहता है-ध्वन्यात्मक रूप से भी सुनाजाता है इसी से यह (ओ३म) शब्देश्वर शंकरका स्वाभाविक नाम है ।

† तज्जपस्तदर्थ भावनम् ॥ यो० अ० १ पा० १ सू० २८

ओमाराधन ६

(ध्रुवपद)÷

ओमनेक बार बोल,
प्रेम के प्रयोगी ॥ टेक ॥

है यही अनादि नाद, निर्विकल्प निर्विवाद,
भूलते न पूज्य पाद, वीतराग योगी ।
ओ० बा० बो० प्रे० प्रयोगी ॥

वेदको प्रमाण मान, अर्थ योजना बखान,
गारहे गुणी सुजान, साधु स्वर्ग भोगी ॥
ओ० बा० बो० प्रे० प्रयोगी ॥

ध्यान में धरें विरक्त, भाव से भजें सुभक्त,
त्यागते अघी अशक्त, पोच पाप रोगी ।
ओ० बा० बो० प्रे० प्रयोगी ॥

शंकरादि नित्य नाम, जो जपे बिसारकाम,
तो बने विवेक धाम, मुक्ति क्यों न होगी ।
ओ० बा० बो० प्रे० प्रयोगी ॥

ओमिष्ट देव ७

दोहा

ओमत्तर के अर्थ का, धरले ध्यान पवित्र ।
बोध बना देगा तुझे, अमृत मित्र का मित्र ॥

÷ ध्रुवपद = ध्रुपद - यह गीत ब्रह्मदण्डकवृत्त से रचागया है इस की टेक उक्तवृत्त के एक चरण का परार्द्ध मात्रहै आगे के चरण उक्त दण्डक के पूर्णचरण स्वरूप हैं -

ओमर्थज्ञान ८

(भजन)

ओमक्षर अखिलाधार,

जिसने जान लिया ॥टेक॥

एक, अखण्ड, अकाय, असङ्गी, अद्वितीय, अविकार,

व्यापक, ब्रह्म, विशुद्धविधाता, विश्व, विश्वभरतार,

को पहँचान लिया।

ओ० अ० जि० जानलिया ॥

भूतनाथ, भुवनेश, स्वयंभू, अभय, भावभण्डार,

नित्य, निरञ्जन, न्यायनियन्ता, निर्गुण, निगमागार,

मनु को मान लिया ॥

ओ० अ० जि० जानलिया ॥

करुणाकन्द, कृपालु, अकर्त्ता, कर्महीन करतार,

परमानन्द–पयोधि, प्रतापी, पूरण–परमोदार,

से सुखदान लिया।

ओ० अ० जि० जान लिया ॥

सत्य सनातन, श्री शंकर को, समझा सबका सार,

अपना जीवन बेड़ा उसने, भवसागर से पार,

करना ठान लिया ॥

ओ० अ० जि० जानलिया ॥१॥

शंकरादिनामोच्चारण ९

(दोहा)

शंकर सर्वाधार है, शंकर ही सुख धाम।

शंकर प्यारे मंत्र हैं, शंकर के सब नाम ॥१॥

भजन-माला १०

(दोहा)

गूंद ज्ञान के तार में, गुरिया गुरु के नाम।
इस माला के मेल से, भजन करो निष्काम ॥१॥

महेशनामावली ११

(भजन)

भज भगवान के हैं,
मंगल मूल नाम ये सारे ॥टेक॥

ओमद्वैत, अनादि, अजन्मा, ईश, असीम, असंग।
एक, अखण्ड, अर्यमा, अत्ता, अखिलाधार, अनंग ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

सत्य सच्चिदानन्द, स्वयंभू, सद्गुरु ज्ञान गणेश।
सिद्धोपास्य, सनातन, स्वामी, मायिक, मुक्त, महेश ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

विश्वविलासी, विश्वविधाता, धाता, पुरुष, पवित्र।
माता, पिता, पितामह, त्राता, बन्धु, सहायक, मित्र ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

विश्वनाथ, विश्वम्भर, ब्रह्मा, विष्णु, विराट्, विशुद्ध।
वरुण, विश्वकर्मा, विज्ञानी, विश्व, बृहस्पति, बुद्ध ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

शेष, सुपर्ण, शुक्र, श्रीस्रष्टा, सविता, शिव, सर्वज्ञ।
पूषा, मात्रा, पुरोहित, होता, इन्द्र, देव, यम, यज्ञ ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

अग्नि, वायु, आकाश, अङ्गिरा, पृथिवी, जल, आदित्य ।
न्यायनिधान, नीतिनिर्माता, निर्मल, निर्गुण, नित्य ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे
ब्रह्म, वेदवक्ता, अविनाशी, दिव्य, अनामय, अन्न ।
धर्मराज, मनु, विद्याधारी, सद्गुण—गण—सम्पन्न ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥
सर्वशक्तिशाली, सुखदाता, संसृति—सागर—सेतु ।
काल, रुद्र, कालानल, कर्त्ता, राहु, चन्द्र, बुध, केतु ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥
गरुत्मान, नारायण, लक्ष्मी, कवि, कूटस्थ, कुबेर ।
महादेव, देवी, सरस्वती, तेज, उरुक्रम, फेर ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥
भक्तो ! नाम सुने शंकर के, अटल एकसौ आठ ।
अर्थ विचारो इस माला के, कर से घिसो न काठ ॥
भ० भ० के० मं० मू० नाम ये सारे ॥

कृपाकी कामना १२

(दोहा)

अनुकम्पा आनन्द की, जब होगी अनुकूल ।
तब ही होंगे जीव के, कष्ट विनष्ट समूल ॥ १ ॥

ईश्वरप्रणिधानपञ्चक १३

(हरिगीतिका छन्द)

अज, अद्वितीय, अखण्ड, अक्षर, अर्यमा, अविकार है ।
अभिराम, अव्याहत, अगोचर, अग्नि, अखिलाधार है ॥

मनु, मुक्त, मङ्गलमूल, मायिक, मानहीन, महेश है।
करतार! तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ॥ १ ॥

वसु, विष्णु, ब्रह्मा, बुध, बृहस्पति, विश्वव्यापक, बुद्ध है।
वरुणेन्द्र, वायु–वरिष्ठ,–विश्रुत, वन्दनीय, विशुद्ध है ॥
गुणहीन, गुरु, विज्ञानसागर, ज्ञान–गम्य–गणेश है।
करतार! तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ॥ २ ॥

निरुपाधि–नारायण–निरञ्जन, निर्भयामृत–नित्य है।
अत्ता, अनादि, अनन्त, अनुपम, अन्न, जल, आदित्य है ॥
परिभू, पुरोहित, प्राण, प्रेरक, प्राज्ञ–पूज्य–प्रजेश है।
करतार! तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ॥ ३ ॥

कवि, काल, कालानल, कृपाकर, केतु, करुणा-कन्द है।
सुखधाम, सत्य, सुपर्ण, सच्छिव, सर्व-प्रिय, स्वच्छन्द है ॥
भगवान, भावुक-भक्त-वत्सल, भू, विभू भुवनेश है।
करतार! तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ॥ ४ ॥

अव्यक्त, अकल, अकाय, अच्युत, अङ्गिरा, अविशेष है।
श्रीमच्छुभाशुभशून्य, शंकर, शुक्र, शासक, शेष है ॥
जगदन्त–जीवन–जन्मकारण, जातवेद, जनेश है।
करतार! तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ॥ ५ ॥

विनय–वन्दना १४

(दोहा)

ज्ञान–गम्य सर्वज्ञ है, शंकर तुही स्वतंत्र।
तेरे ही उपदेश हैं, विश्रुत–वैदिक–मंत्र ॥ १ ॥

शङ्कर-कीर्त्तन १५

(रुचिरा छन्द)

हे शंकर कूटस्थ अकर्त्ता, तू अजरामर-अत्ता है।
तेरी परम-शुद्ध-सत्ता की, सीमा-रहित-महत्ता है॥
जड़ से और जीव से न्यारा, जिस ने तुझ को जाना है।
उस योगीश-महाभागी ने, पकड़ा ठीक ठिकाना है॥ १॥

हे अद्वैत, अनादि, अजन्मा, तू हम सबका स्वामी है।
सर्वाधार, विशुद्ध, विधाता, अविचल अन्तर्यामी है॥
भक्ति-भावना की ध्रुवता से, जो तुझ को अपनाता है।
वह-विद्वान-विवेकी योगी, मनमाना सुख पाता है॥ २॥

हे आदित्य-देव-अविनाशी, तू करतार हमारा है।
तेजोराशि, अखण्ड-प्रतापी, सबका पालन हारा है॥
जो धर ध्यान धारणा तेरी, प्रेम-भाव में भरता है।
तू उस के मस्तिष्क-कोष में, ज्ञान उजाला करता है॥ ३॥

हे निर्लेप-निरञ्जन, प्यारे, तू सब कहीं न पाता है।
सब में पाता है पर सारा, सब में नहीं समाता है।
जो संसार-रूप-रचना में, ब्रह्म-भावना रखता है।
वह तेरे निर्भेद-भाव का, पूरा स्वाद न चखता है॥ ४॥

हे भूतेश महाबल-धारी, तू सब संकट-हारी है।
तेरी मङ्गल-मूल-दया का, जीव-यूथ अधिकारी है॥
धर्मधार जो प्राणी तुझ से, पूरी लगन लगाता है।
विद्या, बल देता है उसको, भ्रम का भूत भगाता है॥५॥

हे आनन्द महासुख दाता, तू त्रिभुवन का त्राता है।
मुक्तक, माता, पिता हमारा, मित्र, सहायक, भ्राता है॥
जो सब छोड़ एक तेरा ही, नाम निरन्तर लेता है।
तू उस प्रेमाधार-पुत्र को, मंत्र-बोध-बल देता है॥६॥

हे बुध, जातवेद, विज्ञानी, तू वैदिक-बल दाता है।
कर्मोपासन, ज्ञान इन्हीं से, जीवन जीव बिताता है॥
जो समीपता पाकर तेरी, जो कुछ जी में भरता है।
अर्थ समझ लेता है जैसा, वह वैसा ही करता है॥७॥

हे करुणा-सागर के स्वामी, तू तारक-पद पाता है।
अपने प्रिय भक्तों का बेड़ा, पल में पार लगाता है॥
तेरी पारहीन प्रभुता से, जिस का जी भरजाता है।
वह योगी संसार-सिन्धु को, मोह त्याग तर जाता है॥८॥

हे सर्वज्ञ, सुबोध—बिहारी, तू अनुपम—विज्ञानी है।
तेरी महिमा गुरुलोगों ने, वचनातीत बखानी है॥
जिसने तू जाना जीवन को, संयम-रस में साना है।
उस संन्यासी ने अपने को, सिद्ध-मनोरथ माना है॥९॥

हे सुविश्वकर्मा, शिव, स्रष्टा, तू कब ठाली रहता है।
निर्विराम तेरी रचना का, स्रोत सदा से बहता है॥
जो आलस्य विसार विवेकी, तेरे घाट—उतरता है।
उस उद्योग-शील के द्वारा, सारा देश सुधरता है॥१०॥

हे निर्दोष-प्रजेश प्रजा को, तू उपजाय बढ़ाता है।
तेरे नैतिक-दण्ड-न्याय से, जीव कर्म-फल पाता है॥

पक्षपात को छोड़ पिता जो, राज-धर्म को धरता है ।
वह सम्राट्-सुधी देशों का, सच्चा शासन करता है ॥११॥

हे जगदीश लोक-लीला के, तू सब दृश्य दिखाता है ।
जिन के द्वारा हमलोगों को, शिल्प अनेक सिखाता है ॥
जिस को नैसर्गिक-शिक्षा का, पूरा अनुभव होता है ।
वह अपने आविष्कारों से, बीज सुयश के बोता है ॥१२॥

हे प्रभु यज्ञ-देव—आनन्दी, तू मंगल-मय—होता है ।
तप्त-भानु-किरणों से तेरा, होम निरन्तर होता है ॥
जो जन तेरी भांति अग्नि में, हित से आहुति देता है ।
वह सारे भौतिक देवों से, दिव्य सुधा-रस लेता है ॥१३॥

हे कालानल, काल, अर्यमा, तू यम, रुद्र, कहाता है ।
धर्म-हीन दुष्टों के दल में, दुःख-प्रवाह बहाता है ॥
जो तेरी वैदिक-पद्धति से, टेढ़ा तिरछा चलता है ।
वह पापी, उद्दण्ड-प्रमादी, घोर ताप से जलता है ॥१४॥

हे कविराज वेदमंत्रों के, तू कविकुल का नेता है ।
गद्य, पद्य, रचना की मेधा, दिव्य-दया कर देता है ॥
सर्व-काल तेरे गुण गाता, जो कवि-मण्डल जीता है ।
शंकर भी है अंश उसी का, ब्रह्म-काव्य रसपीता है ॥१५॥

मित्र मिलाप साखी ९६

मैं समझता था कहीं भी, कुछ पता तेरा नहीं ।
आज शंकर तू मिला तो, अब पता मेरा नहीं ॥१॥

योगोद्गार गीत १७

मिल जाने का ठीक ठिकाना,
अबतो जानोरे३३३। टेक ॥

बैठ गया विज्ञान-कोष पै, गुरु-गौरव का थाना।
प्रेम पन्थ में भेड़ चाल से, पड़ा न मेल मिलाना ॥
बदला बानोरे३३३। अब तो जानोरे३३३॥

मतवालों की भांति न भावे, वाद विवाद बढ़ाना।
समता ने सारे अपनाये, किस को कहूं बिराना ॥
कुनबा मानोरे३३३। अबतो जानोरे३३३॥

देख अखण्ड-एक में नाना, दृश्य महा-सुख माना।
बाजें साथ अनाहत बाजे, थिरके मन मस्ताना ॥
महिमा गानोरे३३३। अब तो जानोरे३३३॥

विद्या-धार-वेद ने जिस को, ब्रह्म-विशुद्ध बखाना।
भागी भूल आज उसप्यारे, शंकर को पहँचाना ॥
मिलना ठानोरे३३३। अब तो जानोरे३३३॥

परमात्म पञ्चक १८

दोहा

शंकर स्वामी एक है, सेवक जीव अनेक।
वे अनेक हैं एक में, वह अनेक में एक ॥१॥
विश्व-विलासी-ब्रह्म का, विश्व-रूप सब ठौर।
विश्वरूपता से परे, शेष नहीं कुछ और ॥२॥
होना सम्भवही नहीं, जिस में सैक, निरेक।
जाना उस अद्वैत को, किसने बिना विवेक ॥३॥

जिस की सत्ता का कहीं, नादि,न मध्य,न अन्त ।
योगी हैं उस बुद्ध के, बिरले सन्त, महन्त ॥४॥
सर्व-शक्ति-सम्पन्न है, स्वगत-सच्चिदानन्द ।
भूले, भेद, अभेद में, मान रहे मति-मन्द ॥५॥

ब्रह्मविवेकाष्टक १९

(घनाक्षरी-कवित्त)

एक शुद्ध-सत्ता में अनेक भाव भासते हैं,
भेद-भावना में भिन्नता का न प्रवेश है।
नानाकार द्रव्य, गुण, धारी मिले नाचते हैं,
अन्तर दिखाने वाले देश का न लेश है ॥
औपाधिक-नाम-रूप-धारा महा-माया मिली,
माया-मानी-जीव जुड़े मायिक-महेश है।
न्यारे न कहाओ, बनो ज्ञानी, मिलो शङ्कर से,
सत्यवादी-वेद का यही तो उपदेश है ॥ १ ॥

आदि, मध्य, अन्तहीन भूमा भद्र, भासता है,
पूरा है, अखण्ड है, असंग है, अलोल है।
विश्व का विभुता परमाणु से भी न्यारा नहीं,
बिश्वता से बाहरी न ठोस है न पोल है ॥
एक निराकार ही की नानाकार कल्पना है,
एकता अलोल में अनेकता की [illegible] है।
भेद हीन नित्य में सभेदों की अनित्यता है,
खोजले तू शंकर जो ब्रह्म की टटोल है ॥ २ ॥

एक में अनेकता, अनेकता में एकता है,
एकता, अनेकता का खेल चकाचूर है।
चेतना से जड़ताको, जड़ता से चेतना को,
भिन्न करे कौनसा प्रमाता—महाशूर है॥
ठोसको, न छोड़े पोल, पोल को न त्यागे ठोस,
ठोस नाचती है, टिकी-पोलसे न दूर है।
भावरूप-सत्ता में असत्ता है, अभाव-रूप,
शंकर यों अत्ता में महत्ता भरपूर है॥ ३॥

सत्त्य-रूप-सत्ता की महत्ता का न अन्त कहीं,
नेति नेति बार बार वेदने बखानी है।
चेतन-स्वयंभू सारे लोकों में समाय रहा,
जीव प्यारे-पुत्र हैं प्रकृति-महारानी है॥
जीवन के चारो फल बांटे भक्त-योगियों को,
पूरण प्रसिद्ध ऐसा दूसरा न दानी है।
शंकर जो राजा महाराजों का महेश उसी,
विश्वनाथ-ब्रह्म की बड़ाई मन मानी है॥४॥

पावक से रूप, स्वाद पानी से, मही से गन्ध,
मारुत से छूत, शब्द अम्बर से पाते हैं।
खाते हैं अनेक अन्न, पीते हैं पवित्र-पेय,
रोम, पाट, छाल, तूल, ओढ़ते, बिछाते हैं॥
अन्य प्राणियों को जाति-योग से मिले हैं भोग,
ज्ञान-सिद्ध-साधनों से मानव कमाते हैं।
शंकर दयालु-दानी देता है दया से दान,
पाय पाय प्यारे जीव जीवन बिताते हैं॥ ५॥

माने अवतार तो अनङ्गता की घोषणा है,
अङ्गहीन सारे अङ्गियों का सिरमौर है।
पूज प्रतिमा तो विश्व-व्यापकता बोलती है,
नारायण-स्वामी का ठिकाना सब ठौर है॥
खोजें घने देवता तो एकता निषेध करे,
एक महादेव कोई दूसरा न और है।
अन्तको प्रपञ्च ही में पाया शुद्ध-शंकर जो,
भावना से भिन्न है न श्याम है, न गौर है॥ ६॥

एक मैं ही सत्य हूं, असत्य मुझे भासता है,
ऐसी अवधारणा, अवश्य भूल भारी है।
पूजते जड़ों को, गुण गाते हैं मरों के सदा,
कर्म अपनाये महा-चेतना विसारी है॥
मानते हैं दिव्य-दूत, पूत, प्यारे शंकर के,
जानते हैं नित्य-निराकार तन-धारी है।
मिथ्या-मत वालों को सचाई कब सूझती है,
ब्रह्म के मिलाप का विवेकी अधिकारी है॥ ७॥

योग साधनों से होगा चित्त का निरोध और,
इन्द्रियों के दर्पकी कुचाल रुक जावेगी।
ध्यान, धारणा के द्वारा सामाधिक-धर्म धार,
चेतना भी संयम की ओर झुक जावेगी॥
मूढ़ता मिटाय महामेधा का बढ़ेगा बेग,
तुच्छ लोक-लालच की लीला लुक जावेगी।
शंकर से पाय परा-विद्या यों मिलेंगे मुक्त,
बन्धन की बासना अविद्या चुक जावेगी॥ ८॥

अविद्यान्ध २०

(दोहा)

ऊत अविद्या के बने, पढ़ प्रामादिक-पाठ ।
ऊलें आपस में लड़ें, सब के उलटे ठाठ ॥ १ ॥

भूल की भरमार २१

(गीत)

भारी भूल मेंरे,
भोले भूले भूले डोलें ॥ टेक ॥
डाल युक्ति के बाट न जिसको, तर्क-तुला पर तोलें ।
अन्धों की अटकल से उसको, टेक टिकाय टटोलें ॥
भा० भू० भो० भू० भू० डोलें ॥
पाय प्रकाश सत्य-सविता का, आंख उलूक न खोलें ।
अभिमानी अन्धेर अधम की, जाग जाग जय बोलें ॥
भा० भू० भो० भू० भू० डोलें ॥
पोच प्रपञ्च पसार प्रमादी, झंझट को झकझोलें ।
स्वर्ग-सहोदर-प्रेमामृत में, वज्र बैर-विष घोलें ॥
भा० भू० भो० भू० भू० डोलें ॥
हम तो शठता त्याग संगाती, सदुपदेश के होलें ।
शंकर समता की सरिता में, तन, मन, वाणी, धोलें ॥
भा० भू०भो० भू० भू० डोलें ॥ १ ॥

विशुद्ध-बोध २२

(दोहा)

खेल चुका खोटे, खरे, निपट खोखले खेल ।
आज मोह माया तजी, शंकर से कर मेल ॥ १ ॥

कूटस्थ-कूटोक्ति २३

(राजगीत)

कुछनहीं, कुछ में समाया, कुछ नहीं।
कुछन कुछ का भेद पाया, कुछ नहीं॥
एकरस कुछ है नहीं कुछ, दूसरा।
कुछ नहीं बिगड़ा, बनाया, कुछ नहीं॥
कुछ न उलझा, कुछ नहीं के, जाल में।
कुछ पड़ा पाया, गमाया, कुछ नहीं॥
बन गया कुछ और से कुछ, औरही।
जान कर कुछ भी जनाया, कुछ नहीं॥
कुछ न मैं, तू कुछ नहीं, कुछ, और है।
कुछ नहीं अपना, पराया, कुछ नहीं॥
निधि मिली जिसको न कुछके, मेलकी।
उस अबुध के हाथ आया, कुछ नहीं॥
वह वृथा अनमोल जीवन, खो रहा।
धर्म-धन जिसने कमाया, कुछ नहीं॥
अब निरन्तर मेल शंकर, से हुआ।
कर सकी अनमेल माया, कुछ नहीं॥ १॥

जड़ चेतन का मेल २४

(दोहा)

ज्ञान बिना होते नहीं, सिद्ध यथोचित कर्म।
रचते हैं संसार को, जड़ चेतन के धर्म॥ १॥

सद सन्मेलन २५

(भजन)

पाया सदसदुभय संयोग॥ टेक॥

चतुर चातुरी से कर देखो, अमित यत्न उद्योग।
इनका हुआ न, है न, नहोगा, अन्तर युक्त वियोग॥
पाया सदसदुभय संयोग॥
कौन मिटावे जड़ चेतन का, स्वाभाविक-अतियोग।
ठोस पोल से अलग न होगी, वृथा उपाय-प्रयोग॥
पाया सदसदुभय संयोग॥
अटका यही सकल जीवों से, बाधक—बन्धन-रोग।
जीवन, जन्म, मरण के द्वारा, रहे कर्म फल भोग॥
पाया सदसदुभय संयोग॥
जीवन् मुक्त महा पुरुषों के, मान अमोघ-नियोग।
धार विवेक बुद्ध बनते हैं, शंकर बिरले लोग॥
पाया सदसदुभय संयोग॥ १॥

वेदोक्त ब्रह्म २६

(दोहा)

भूलों की भरमार के, भूल भयानक भेद।
बतलाता है ब्रह्म को, इस प्रकार से बेद॥ १॥

ब्रह्म की विश्वरूपता २७

(भजन)

यों शुद्ध सच्चिदानन्द,
ब्रह्म को बतलाता है वेद॥ टेक॥
केवल एक अनेक बना है, निर्विवेक, सविवेक बना है,
रूपहीन बन गया रंगीला, लोहित, श्याम, सफ़ेद।
ब्रह्मको बतलता है वेद॥

टिका अखण्ड समष्टि-रूपसे, खण्डित विचरे व्यष्टि-रूपसे,
जड़ चैतन्य विशिष्ट-रूपसे, रहै अभेद सभेद।
ब्रह्मको बतलाता है वेद ॥

पूरण प्रेम-पयोधि प्रतापी, मङ्गल-मूल महेश मिलापी,
सिद्ध एक रस सर्व-हितैषी, कहीं न अन्तर, छेद।
ब्रह्मको बतलाता है वेद ॥

विश्व विधायक विश्वम्भर है, सत्य-सनातन श्रीशंकर है,
विमल-विचार-शील भक्तों के, दूर करे भ्रम खेद ॥
ब्रह्मको बतलाता है वेद ॥ १ ॥

ब्रह्मज्योति का प्रकाश २८

(दोहा)

प्यारे प्रभु की ज्योति का, देख अखण्ड प्रकाश।
सत्य मान हो जाय गा, मोह-तिमिर का नाश ॥ १ ॥

जागती ज्योति २९

(भजन)

निरखो नयन ज्ञान के खोल,
प्रभुकी ज्योति जगमगाती है ॥ टेक ॥

देखो! दमक रही सबठौर, चमके नहीं कहीं कुछ और,
प्यारी हम सब की सिरमौर, उज्वल अङ्कुर उपजाती है।
नि० न० ज्ञा० खो० प्र० जगमगाती है ॥

जिस ने त्यागे विषय-विकार, मन में धारे विमल-विचार,
समझा सदुपदेश का सार, उस को महिमा दरसाती है ॥
नि० न० ज्ञा० खो० प्र० ज्यो० जगमगाती है।

जिस को किया कुमति ने अन्ध, बिगड़ा जीवन का सुप्रबन्ध,
कुछ भी रहा न तप का गन्ध, झलके, पर न उसे पाती है।
नि० न० ज्ञा० खो० प्र० ज्यो० जगमगाती है ॥
जिस ने झंझट की झर झेल, परखे जड़ चेतन के खेल,
अपना कियां निरन्तर मेल, शंकर उस को अपनाता है ॥
नि० न० ज्ञा० खो० प्र० ज्यो० जगमगाती है ॥ १ ॥

ईश्वर का आधिपत्य ३०

(दोहा)

स्वामी सब संसार का, वह अविनाशी एक।
जिसके माया जाल में, उलझे जीव अनेक ॥१॥

ब्रह्मज्योति ३१

(मालतीवृत्त)

ज्योति अखण्ड निरञ्जन की, भरपूर प्रशस्त प्रकाश रही है।
दिव्य-छटा निरखी जिस ने, उस ने दुविधा भ्रम की न गही है ॥
सिद्ध विलोक बखान रहे, सब मे छवि एक अनन्य कही है।
तू कर योग निहार चुका, अब शंकर जीवन मुक्त सही है ॥१॥

ब्रह्मविज्ञान ३२

दोहा

भेद न सूझे वेद में, जान लिया जगदीश।
पूजे पग विज्ञान के, फोड़ कुमति का शीश ॥१॥

मिलाप की उमंग ३३

(सगणात्मक सवैया)

अबलों न चले उस पद्धति पै, जिसपै व्रत-शील-विनीत गये।

वह आज अचानक सूझ पड़ी, भ्रम के दिन बाधक बीत गये ॥
प्रभु शंकर की सुधि साथ लगी, मुख मोड़ हठी विपरीत गये ।
चलते चलते हम हार गये, पर पाय मनोरथ जीत गये ॥१॥

जन्माद्यस्ययतः ३४

(दोहा)

होते हैं जिस एक से, हम सब के जन्मादि ।
सत्ता है उस ईश की, शुद्ध अनन्त, अनादि ॥ १ ॥

परमात्मा सर्व-शक्तिमान् है ३५

(सगणात्मक-सवैया)

जिसने सब लोक रचे सब को, उपजाय, बढ़ाय विनाश करे ।
सबका प्रभु, साथ रहै सब के, सब में भरपूर प्रकाश करे ॥
सब अस्थिर-दृश्य दुरें दरसें, सब का सबठौर विकाश करे ।
वह शङ्कर मित्र हितू सब का, सब दुःख हरे न हताश करे ॥१॥

ब्रह्म की व्यापकता ३६

(दोहा)

सर्व-शक्ति-सम्पन्न है, रचना रचे अनेक ।
साथ सर्व--संघात के, रहै एक-रस एक ॥१॥

ब्रह्म की निर्लेपता ३७

(भजन)

तुझ में रहै सर्व-संघात,
फिर भी सब से न्यारा तू है ॥टेक॥

उमगा ज्ञान, क्रिया का मेल, ठानी गौणिक ठेलमठेल,

खोला चेतन, जड़ का खेल, इस का कारण सारा तू है।

तु० र० स० सं० फि० स० न्यारा तू है ॥

उपजा-सार हीन संसार, आकर चार, अनेकाकार,

जिन में जीवों के परिवार, प्रकटे, पालन हारा तू है ॥

तु० र० स० सं० फि० स० न्यारा तू है ॥

सब का साथी, सब से दूर, सब में पाता है भरपूर,

कोमल, कड़े, क्रूर, अक्रूर, सब का एक सहारा तू है।

तु० र० स० सं० फि० स० न्यारा तू है ॥

जिन पै पड़े भूल के फन्द, क्या समझेंगे वे मतिमन्द,

उन को होगा परमानन्द, शंकर जिन का प्यारा तू है।

तु० र० स० सं० फि० स० न्यारा तू है ॥

ईश्वर का कर्तृत्व ३८

(दोहा)

सब जीवों का मित्र है, जो जगदीश पवित्र।

उपजावे, धारे, हरे, वह संसार विचित्र ॥ १ ॥

विश्वकी विश्वरचना ३९

(षट्पदीछन्द)

प्रकटे भौतिक-लोक, मेघ, तड़िता, ग्रह, तारे।

झील, नदी, नद, सिन्धु, देश, वन, भूधर भारे ॥

तन, स्वेदज, उद्भिज्ज, जरायुज, अण्डज, सारे।

अमित-अनेकाकार, चराचर जीव निहारे ॥

नव द्रव्यों के अति-योगसे, उपजा सब संसार है।

इस अस्थिर के अस्तित्व का, शंकर तू करतार है ॥ १ ॥

ईश्वरका औदार्य ४०

(दोहा)

अपनालेता है जिसे, शंकर परमोदार ।
देता है उस जीवको, जीवनके फल चार ॥ १ ॥

परमात्माका पूरा प्यार ४१

(भजन)

जगदाधार दयालु उदार,
जिस पर पूरा प्यार करेगा ॥टेक॥
उस की बिगड़ी चाल सुधार, सिर से भ्रम का भूत उतार,
दे कर मङ्गल-मूल-विचार, उर में उत्तम-भाव भरेगा ।
ज० द० उ० जि० पूरा प्यार करेगा ॥
दैहिक, दैविक, भौतिक, ताप, दाहक-दम्भ कुकर्म-कलाप,
अगले, पिछले, सञ्चित-पाप, लेकर साथ प्रमाद मरे गा ॥
ज० द० उ० जि० पूरा प्यार करेगा ॥
कर के तन, मन, बाणी, शुद्ध, जीवन धार धर्म अविरुद्ध ।
बन कर बोध-विहारी-बुद्ध, दुस्तर मोह-समुद्र तरेगा ॥
ज० द० उ० जि० पूरा प्यार करेगा ॥
अनुचित भोगोंसे मुख मोड़, अस्थिर विषय-वासना छोड़ ।
बन्धन जन्म, मरण, के तोड़, शंकर मुक्त-स्वरूप धरेगा ॥
ज० द० उ० जि० पूरा प्यार करेगा ॥ १ ॥

भूतेश्वर का भय और प्यार ४२

(दोहा)

जिसने जीता काल को, भूत किये भय भीत ।
वे प्यारे उस ईश के, जो न चलें विपरीत ॥ १ ॥

महादेव-रुद्र से सब डरते हैं ४३

(भजन)

जिस अविनाशी से डरते हैं,
भूत: देव, जड़, चेतन, सारे ॥ टेक ॥
जिस के डर से अम्बर बोले, उग्र मन्द-गति मारुत डोले,
पावक जले, प्रवाहित पानी, युगल-वेग बसुधा ने धारे।
जि० अ० ड० भू० दे० ज० चे० सारे ॥
जिसका दण्ड दसों दिस धावे, काल डरे ऋतु-चक्र चलावे,
बरसें मेघ, दामिनी दमके, भानु तपे, चमकें शशि, तारे।
जि० अ० ड० भू० दे० ज० चे० सारे ॥
मन को जिस का कोप डरावे, घेर प्रकृति को नाच नचावे,
जीव कर्म-फल भोग रहे हैं, जीवन, जन्म, मरण, के मारे।
जि० अ० ड० भू० दे० ज० चे० सारे ॥
जो भय मान धर्म धरते हैं, शंकर कर्म-योग करते हैं,
वे विवेक-वारिधि बड़-भागी, बनते हैं उस प्रभु के प्यारे।
जि० अ० ड० भू० दे० ज० चे० सारे ॥ १ ॥

रुद्ररोष ४४

(दोहा)

करता है जो पातकी, विधि निषेध का लोप।
होता है उस नीच पै, शंकर प्रभु का कोप ॥१॥

रुद्र दण्ड ४५

(शुद्धगात्मक-राजगीत)

खलों में खेलते खाते, भलों को जो जलाते हैं।
विधाता न्यायकारी से, सदा वे दण्ड पाते हैं ॥

पूतापी तीन तापों से, प्रमत्तों को तपाता है।
कुटुम्बी, मित्र, प्यारे भी, बचाने को न आते हैं॥
अजी जो अङ्ग-रक्षा पै, न पूरा ध्यान देते हैं।
मरें वे नारकी पीड़ा, न रोगों से छुड़ाते हैं॥
पूमादी, पोच, पाखंडी, अधर्मी, अन्ध-विश्वासी।
अविद्या के अंधेरे में, मतों की मार खाते हैं॥
अभागी, आलसी, ओछे, अनुत्साही, अनुद्योगी।
पड़े दुर्दैव को कोसें, मरे जीते कहाते हैं॥
पराये माल से मोघू, बने पूारब्ध के पूरे।
मिलाते धूलि में पूंजी, कुकर्मों को कमाते हैं॥
दुराचारी, दुरारम्भी, कृतघ्नी, जालिया ज्वारी।
घमराडी, जार, अन्यायी, कुलों को भी लजाते हैं॥
हठीले, हीज, अज्ञानी, निकम्मे मादकी, कामी।
गपोड़ू, दुर्गुणी, गुराडे, पूतिष्ठा को डुबाते हैं॥
कुचाली, चोर, हत्यारे, बिसासी, राज-विद्रोही।
पूजा, राजा, किसीकी भी, न सत्ता में समाते हैं॥
बिचारी बालिकाओं को, वृथा वैधव्य के द्वारा।
घरों में जो रुलाते हैं, न वे खाते अघाते हैं॥
गिराते गर्भ रांडों के, बिगोते जो अहिंसाको।
गिरें वे ज्ञान-गंगा के, पूवाहों में न न्हाते हैं॥
न पालें जो अनाथों को, खिलाते माल संडों को।
गढ़े में पुराय की ऊंची, प्रथा को वे गिराते हैं॥
किसी भी आततायी का, कभी पीछा न छूटेगा।
हरें जो प्राण औरों के, गले वे भी कटाते हैं॥
बचेंगे शंकरागामी, दिनों में वे कुचालों से।
जिन्हें ये दराड के थोड़े, नमूने भी डराते हैं॥१॥

वैदिक धर्म ४६

(दोहा)

मंत्रों के मुनि योग से, अर्थ विचार विचार।
करते हैं संसार में, वैदिक—धर्म-प्रचार ॥१॥

अपौरुषेय वेद ४७

(गीत)

उस अद्वैत वेद की महिमा,
ठौर ठौर गुरु-जन गाते हैं ॥टेक॥

शब्द न जिस में नर भाषा के, भाव न भ्रम की परिभाषा के,
लिखा न कल्पित लेख पृथा से, लौकिक लोग न पढ़ पाते हैं।
उ० अ० वे० म० ठौ० गु० गाते हैं ॥

जिस के मंत्र विवेक बढ़ाते, मोह महीधर पै न चढ़ाते,
मेंट अनर्थ, सदर्थ पसारें, ध्रुव-धर्मामृत बरसाते हैं ॥
उ० अ० वे० म० ठौ० गु० गाते हैं ॥

ज्ञान-योग—बल से बुध बांचें, कर्म-योग—अनुभव से जांचें,
विधि, निषेध कर न्यारे न्यारे, क्रम से सब को समझाते हैं।
उ० अ० वे० म० ठौ० गु० गाते हैं ॥

जो वैदिक उपदेश न होता, तो फिर कौन अमंगल खोता,
मनुज मान शिक्षा शंकर की, भव—सागर को तरजाते हैं ॥
उ० अ० वे० म० ठौ० गु० गाते हैं ॥१॥

ब्रह्मोपदेश की व्यापकता ४८

(दोहा)

व्यापक हैं संसार में, विधि, निषेध विख्यात ।
शिक्षा मानव-जाति को, मिलती है दिन रात ॥१॥

नैसर्गिक-शिक्षा-निदर्शन ४९

(शंकर-छन्द)

जिस की सत्ता भाँति भाँति के, भौतिक-दृश्य दिखाती है ।
जीवों को जीवन धारण के, नाना नियम सिखाती है ॥
सर्व-नियन्ता, सर्व-हितैषी, वह चेतन-भुवनेश ।
नैसर्गिक-विधि से देता है, हम सब को उपदेश ॥

न्याय-शील-शंकर जीवों से, कहिये क्या कुछ लेता है ।
सुखदा-सामग्री का सब को, दान दया कर देता है ॥
सर्व सृष्टि-रचना को देखो, नयन सुमति के खोल ।
ठौर ठौर शिक्षा मिलती है, गुरु-मुख से बिन मोल ॥२॥

देखो भानु अखण्ड-प्रतापी, तम को मार भगाता है ।
तेज हीन तारा-मण्डल में, उज्ज्वल-ज्योति जगाता है ॥
ज्ञान-उजाला बांट रहा है, यों प्रभु परम-सुजान ।
तत्व-तेज धारी बनते हैं, भ्रम-तम त्याग अजान ॥ ३ ॥

तारे भी तम-तोप रात में, दिव्य-दृश्य दरसाते हैं ।
चन्द्र बिम्ब की भांति उजाला, बांट सुधा बरसाते हैं ॥

यों अपने ज्ञानी पुरुषों से, पढ़ कर मंत्र-प्रयोग।
छोड़ अविद्या सुख पाते हैं, गुरु-मुख लौकिक लोग ॥ ४॥

जो शिव से स्वाभाविक-शिक्षा, जाति क्रमागत पाते हैं।
सुलभ साधनों से वे प्राणी, जीवन-काल बिताते हैं॥
मानव-जाति नहीं जीती है, उन सब के अनुसार।
साधन पाया हम लोगों ने, केवल विमल-विचार ॥ ५॥

जो योगी जिस ज्ञेय-वस्तु में, पूरी लगन लगाता है।
मर्म जान लेता है उस का, मन माना फल पाता है॥
वह अपने आविष्कारों का, कर सब को उपदेश।
ठीक ठीक समझा देता है, फिर फिर देश विदेश ॥ ६॥

जो बड़भागी ब्रह्म-ज्ञान के, जितने टुकड़े पावे हैं।
वे सब साधारण लोगों को, देकर बोध बढ़ाते हैं॥
तर्क-सिद्ध-सद्भाव अनूठे, विधि, निषेध-मय-मंत्र।
संग्रह-ग्रन्थाकार उन्हीं के, प्रकटे प्रचलित तंत्र ॥ ७॥

लेख अनोखे, भाव अनूठे, अक्षर, शब्द, निराले हैं।
दुर्गम-गूढ़-ब्रह्म-विद्या के, बिरले पढ़ने वाले हैं॥
ज्ञानागार घने भरते हैं, विषय बटोर बटोर।
पाठक-वृन्द नहीं पावेंगे, इति कर इस का छोर ॥ ८॥

तर्क, युक्तियों की पटुता से, जब जड़ता को खोते हैं।
सत्य-शील वैदिक-विद्या के, तब अधिकारी होते हैं॥
बाल-ब्रह्मचारी पढ़ते हैं, सोच, समझ, सुन, देख।
पाठ-प्रणाली जांच लीजिये, पढ़ कतिपय उल्लेख ॥ ९॥

जन्म-काल में जिस के द्वारा, जननी का पय पीते थे।
साथ वही साधन लाये थे, इतर गुणों से रीते थे॥
ज्ञान-योग से गुरु लोगों के, उमगे विशद- विचार।
कर्म-योग बल से पाते हैं, तप-तरु के फल चार॥ १०॥

जांच लीजिये जितने प्राणी, जो कुछ बोला करते हैं।
वे उस भांति मनो भावों की, खिड़की खोला करते हैं॥
स्वाभाविक-भाषाका हम को, मिला न प्रचुर-प्रसाद।
शब्द पराये बोल रहे हैं, कर वर्णिक-अनुवाद॥ ११॥

अपने कानों में ध्वनि-रूपी, जितने शब्द समाते हैं।
मुख से उन्हें निकालें तो वे, वर्ण-रूप बनजाते हैं॥
वही अक्षर कहलाते हैं, स्वर—व्यञ्जन-समुदाय।
यों आकाश बना भाषण का, कारण, सहित-उपाय॥ १२॥

जिनके स्वाभाविक शब्दों को, पास, दूर, सुनपाते हैं।
वे अनुभूत हमारे सारे, अर्थ समझ में आते हैं॥
यों शिव से भाषा रचने का, सुनकर उक्त-उपाय।
कल्पित-शब्द साथ अर्थों के, समुचित लिये मिलाय॥ १३॥

भूतों के गुण और भूत यों, दशक, दशों का जाना है।
इन में नौ प्रत्यक्ष शेष को, अटकल ही से माना है॥
तारतम्यता देख इन्हीं की, उपजा गणित-विवेक।
आंक लिये नौ अङ्क असङ्गी, शून्य सकल-धर एक॥ १४॥

जिन के खुर, पंजे, पैरों के, चिन्ह मही पर पाते हैं।
पामर, पक्षी, मानवादि वे, याद उसीदम आते हैं॥

जब यों अर्थ बताते देखे, अमित चिन्ह ऋजु बङ्क ।
मान लिये तब सङ्केतों में, लिख लिख अक्षर, अङ्क ॥१५॥

*नीचे, मध्यम, ऊँचे स्वर से, कुकुट बांग लगाता है ।
जागे आप सदैव सबों को, पिछली रात जगाता है ॥
तीन भांति के उच्चारण का, समझे सरल प्रयोग ।
ब्रह्म-काल में उठना सीखे, इस विधि से हम लोग ॥१६॥

+जागें पिछली रात प्रभाती, राग मनोहर गाते हैं ।
हेल मेल से जल-क्रीडा को, कारण्डव सबजाते हैं ॥
यों सीखे प्रभु के गुण गाना, सुन कर स्वर गन्धार ।
भानूदय से पहले न्हाना, तरना विविध-प्रकार ॥१७॥

आतप-ताप स्नेह-रसों को, मेघ-रूप कर देता है ।
सार-सुगन्ध सर्व- द्रव्यों के, मारुत में भर देता है ॥
होते हैं जल, वायु, शुद्ध यों, बल-बर्द्धक, अनुकूल ।
भानु-देव से सीखा हम ने, हवन-कर्म-सुख-मूल ॥१८॥

देखो वैदिक-यज्ञकुण्ड में, हव्य-कवलिका पाता है ।
न्याय-धर्म से सब देवों को, सार-भाग पहुंचाता है ॥
भस्म छोड़ कर होजाता है, हुतभुक् अन्तर धान ।
दान करें यों विद्या-धन का, बुध-याजक यजमान ॥१९॥

---

*अनुदात्त=नीचेस्वरसे – स्वरित=मध्यम स्वरसे – उदात्त=ऊंचेस्वरसे – यों ३ तीन प्रकारका शब्दोच्चारण होता है ।
जोकि कुक्कुट से सीखागया है ।

+कारण्डव (बतख़) ये पक्षी ब्रह्ममुहूर्त में उठकर इकट्ठे होकर गाते हुये स्नान को जाते हैं ।

नीर मेघ से, मेघ भाप से, भाप नीर बन जाता है।
पिघले, जमे, उड़े, यों पानी, कौतुक तीन दिखाता है॥
ये रस, अन्न, प्राण, दाता के, द्रव, दृढ़, वायु, विकार।
देखो! देवो, ऋषियो, पितरो, करिये जगदुपकार॥२०॥

औषधि, अन्न, आदि सामग्री, सुखदा सब को देती है।
अपने उपजाऊ बीजों को, सावधान रख लेती है॥
जीव जन्म लेते मरते हैं, जिस पर जीवन-भोग।
उस बसुन्धरा-माता-की सी, सुगति गहो गुरु-लोग॥२१॥

देखो? फल-स्वादिष्ट-रसीले, अपने आप न खाते हैं।
बाँट बांट सर्वस्व सबों को, अचल-प्रतिष्ठा पाते हैं॥
छाया-दान दिया करते हैं, प्रखर-ताप शिर धार।
सीखो! पादप सिख लाते हैं, करना पर उपकार॥२२॥

*तीन भांति के जंगम-प्राणी, जो कुछ रुचि से खाते हैं।
भिन्न-भाव से भेद उसी के, अन्न अनेक कहाते हैं॥
वे अभक्ष्य हैं जगन लिये जो, गत-रस-स्वाद-सु-वास।
परखाता है ईश सबों को, बदन, घ्राण, रच पास॥२३॥

आमिष-भक्षी क्रूर-तामसी, निष्ठुर, हिंसक होते हैं।
कन्द, मूल, फल खाने वाले, उग्र-बिलास न बोते हैं॥
पल, फल, खौओं को पाते हैं, अभया शरण-विशिष्ट।
ऐसा देख निरामिष-भोजी, सदय बनो सब शिष्ट॥२४॥

* तीन भांति के जंगम-प्राणी = स्वेदज १ अण्डज २ जरायुज ३ –

शब्द, गन्ध, आलोक, दूर से, कर्ण, घ्राण, दृग, पाते हैं ।
तीनों के उप-भोग किसी के, मन को नहीं तपाते हैं ॥
जिह्वा, सिस्न, करें विषयों से, निपट–निरन्तर योग ।
* विधि की बाग देख दोनों के, समुचित करो प्रयोग ॥२५॥

विधि की परिपाटी से न्यारे, जितने प्राणी चलते हैं ।
वे आजन्म निषेधानल के, तीव्र-ताप से जलते हैं ॥
ऊलें उद्धत न्याय–धर्म से, रहित रहैं बिन जोड़ ।
देखो झुण्ड मृगी मृगादि के, तज पशु-पन की होड़ ॥२६॥

सारसादि चिड़ियों के जोड़े, दम्पति-भाव दिखाते हैं ।
जोड़े से रहने की हम को, उत्तम-रीति सिखाते हैं ॥
देते फिरें गृहस्थ-धर्म का, परमोचित उपदेश ।
इन के प्रेमाचार–चक्र में, हिल मिल करो प्रवेश ॥२७॥

जोड़ मिले मादा, नर प्राणी, प्रेमादर्श विचरते हैं ।
मिथ्याहार–विहार न जाने, अत्याचार न करते हैं ॥
गर्भाधान करें व्रत–धारी, पाय समय सविधान ।
त्यागें भोग प्रसव लों दोनों, समझो रसिक-सुजान ॥२८॥

जिन के जोड़ नहीं जन्मे वे, अस्थिर-मेल मिलाते हैं ।
नारी एक घने नर घेरें, खेल असभ्य खिलाते हैं ॥

---

* विधि की "बाग" देख = जिह्वा (जीभ) सिस्न (मूत्रेन्द्रिय) ये दोनों विषया धार से निरन्तर–योग कर के विषय-लाभ करते हैं अतएव अनुचित व्यापारों से औरों को दुःख देते हैं – परमात्मा ने इन दोनों की "बाग" (लगाम) लगादी है जिसे देख कर मनुष्य इन को वश में रक्खे क्योंकि इन का यथेच्छाचार, अनर्थ का कारण है ।

कट्टर कामुक हो जाते हैं, विकल-अङ्ग विकराल।
देखो श्वान, शृगाल आदि को, चलो न अनुचित चाल ॥२९॥

+ जिन जोड़ों के जीव अभागे, एक एक मरजाते हैं।
शेष बचे वे जाति-वृन्द को, शोक-पुकार सुनाते हैं॥
रचते हैं रंडुआ, रांडों के, सकल-पञ्च पुनि जोड़।
यों उद्धारो विधवा-दल को, कुमत, पन्थ, छल, छोड़ ॥३०॥

* मानव-जाति सुता, पुत्रों को, साथ नहीं उपजाती है।
दो कुनबों से कन्या, बर को, लेकर जोड़ मिलाती है॥
वे दुलही, दुलहा होते हैं, नवल-गृही प्रण ठान।
रखते हैं दो परिवारों से, हिल-मिल मेल समान ॥३१॥

चारा चुगते अण्डज-बच्चे, दूध जरायुज पीते हैं।
मात पिता अथवा माता के, पास बास कर जीते हैं॥

+ जोड़े वाले जीव, खण्डित जोड़ों के फुट्टैल रांड और रंडुओं को मिला कर, पुनः जोड़े बना लेते हैं - एक बार किसी शिकारी ने सारस के एक जोड़े में से एक पक्षी को मार डाला, वह बचा हुआ विहंग कई दिनों तक चिल्लाता रहा, एक दिन उस के पास आसपास के अनेक सारस आये और शाम को चले गये, उस स्थान पर एक जोड़ा रह गया। इस से सिद्ध है कि उस फुट्टैल का जोड़ा मिला गये! यह दृश्य ग्रन्थकार तथा अन्य अनेक मनुष्यों ने देखा था।

* मनुष्य जाति की स्त्रियां लड़की लड़कों के जोड़े नहीं जनतीं कभी दैवात् ऐसा होता भी है तो यह नियम नहीं कहा जासकता। मनुष्यों को जोड़े से रहने की शिक्षा मिली है इसी से दो कुथवों से लड़की लड़के लेकर जोड़े मिलाये जाते हैं परन्तु उन दोनों परिवारों से नाता संबन्ध स्त्री पुरुष दोनों का समान रहता है - दोनों ओर एक से शब्द बोले जाते हैं।

वे समर्थ होते ही उन से, अलग रहें तज सङ्ग ।
यों कृतघ्नता का मनुजों पै, चढ़े न कुयश–कुरङ्ग ॥३२॥

वस्त्र बनाने की पटुता के, मकड़ी दृश्य दिखाती है ।
सूत कात कर ताना, बाना, बुनना सदा सिखाती है ॥
गोल गोल भीतों पर पोते, धवला—वरणा—अनेक ।
कागद की रचना का सूझा, हम को सरल–विवेक ॥३३॥

न्योले, मूषिकादि बिल खोदें, तन्तुक जाल बिछाते हैं ।
तोते, चटके आदि पखेरू, कोटर, झोंझ, बनाते हैं ॥
घरुआ रचें घिरोली, चिट्टे, कच कच कीचड़ लाय ।
यों हम गेह बनाने सीखे, निरख अनेक उपाय ॥३४॥

अपने मान अन्य जीवों के, विवरों में घुस जाते हैं ।
खोज खोज रहने वालों को, खा कर खोज मिटाते हैं ॥
कालकूट उगलें औरों के, बन कर अन्तिम–काल ।
रक्षा करिये उरगों कीसी, गहो न गृह-पति चाल ॥३५॥

देख लीजिये सब जीवों को, नेक न ठाली रहते हैं ।
भोगें भोग दरिद्रासुर की, भूखे मार न सहते हैं ॥
करते हैं उद्योग अड़ीले, कुल–पद्धति अपनाय ।
तो हम क्यों आलस्य न छोड़ें, शुभ साधन बल-पाय ॥३६॥

नाड़ी और नसों से जिन के, अङ्ग रसादिक पाते हैं ।
जन्म धार जीवन को भोगें, देह त्याग मरजाते हैं ॥
ज्ञान, क्रिया धारी उपजाते, निज तन से तन अन्य ।
वे सजीव–प्राणी पहँचाने, परख चराचर धन्य ॥३७॥